अनुशासन

"तीन टिकट देना।"

"दो टिकट मुझे देना।"

"पहले मुझे एक टिकट देना, में लाइन में हूँ।"

"हाँ । मुझे देना", "मुझे देना" "मुझे..." एक साथ उठती अनगिनत आवाजों के साथ सिनेमा की खिड़की के सामने लगी लाइन भीड़ का रूप धारण कर ली।

"लो दोस्त, चार टिकट संभाल। हाल में चलते हैं, लेकिन रुको, शर्ट फट गयी। जरा ठीक कर लूँ। बहुत बुरा लग रहा है।"

"कोई बात नहीं, खुशी है कि टिकट पा गये।"

खिड़की के सामने खींच-तान, धक्का-मुक्की में आदमी-आदमी के ऊपर-नीचे चढ़ते-गिरते दिखाई पड़ रहे थे। वातावरण शोर-शराबे से आहत हो चला था।

"लाइन में खड़े हो जाओ।" तेजी से आते इंस्पेक्टर ने डपट कर कहा। साथ के एक सिपाही ने दूसरे सिपाही की ओर संकेत कर कहा, "मारो साल्लो को।"

दूसरे सिपाही ने तड़ातड़ डंडा बरसाते हुए कहा-

"राक्षसो सनीमा देखना है, तो लाइन भी नहीं लगा सकते। लो ! और लो टिकट !!" कुछ ही पल में इंस्पेक्टर के आदेश पर खिड़की बंद हो चुकी थी। अब तो लाइन बन चुकी थी। लाइन बहुत लंबी थी। खिड़की खोलने के आदेश के बाद लाइन का पहला व्यक्ति जो कई डंडे खा कर लाइन में पहले नंबर पर डटा था, टिकट पाता, इंस्पेक्टर ने कर्कश स्वर में कहा- "रुक जा !"

इंस्पेक्टर के साथ खड़े सिपाही ने रोब से अपना हाथ खिड़की के अंदर करके धीरे से कहा: "तीन टिकट...।" तीन टिकट लेकर इंस्पेक्टर सिनेमा हाल की ओर चल पड़ा। उसके पीछे हो लिए दोनों पुलिस। कुछ ही पल में बाहर शोर बढ़ा और आदमियों को लाइन टूटे बाँध की तरह बिखर गई। आदमियों का रेला खिड़की की ओर बढ़ चला।

सिद्धार्थ शंकर

सीख

आचार्य जी का मिलन मेरे लिए कितना सुखद तथा प्रेरणादायक रहा है। में वर्षों से उनके मधुर सान्निध्य में बहुत कुछ सीखता रहा हूँ। उनकी ही प्रेरणा से मैंने एम. ए. परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली। ईमानदारी और कर्त्तव्यपालन की उनकी सीख को मैंने गाँठ बाँध लिया, जीवन भर के लिए। यही गुरुमंत्र रंग लाया और विश्वविद्यालय में सह कुलसचिव पद पर मेरा चयन हो गया। मेरे विश्वसनीय कार्य से संतुष्ट होकर मुझे

गोपनीय विभाग में कार्य दिया गया। आचार्य जी को जब इस सुखद समाचार का पता लगा, तो बधाई देने घर पहुँचे। उन्होंने बधाई दी और बहुत प्रसन्न दीखे, वे। कुछ देर में बोले-

"गौतम जी आपको एक कष्ट करना होगा। मेरे दोस्त का लड़का इस वर्ष एम.ए. अंग्रेजी फाइनल में है। परीक्षा चल रही है। कापियाँ कहाँ-कहाँ जा रही हैं ? बता दीजिएगा।"

"आँ..." मेरे मुँह से एकाएक निरर्थक-सार्थक ध्वनि निकली।

आचार्य जी ने चलते हुए अपने घर आने का निमंत्रण दिया। मैं उनके घर न जा सकता। कई दिनों तक उनके बुलावे आते रहे। हर बार असमंजस का पारा झटके के साथ ऊपर चढ़ता ही रहा।

आज महीनों बाद भी जब उनके घर के आस-पास से निकलता हूँ, तो असमय का असंभावित असमंजस मुझे विपरीत दिशा में धकियाने लगता है कि कहीं...

ISSN:2583-8849